आचार्य तुलसी: अहिंसा एवं शांति के आदर्श

आचार्य तुलसी जनशताब्दी शुभारंभ (5 नवम्बर, 2013) के अवसर पर विशेष

आचार्य श्री तुलसी की जन्मषताब्दी के शुभारंभ के साथ मूल्यवान सौ वर्श के उजालों से रू-ब-रू होने का दुर्लभ अवसर सामने आ रहा है। एक ऐसी रोषनी जो निरन्तर सम्पूर्ण मानवता का पथदर्षन करती रही है और उनका स्मरण एक बार पुनः मानवता को नई ऊर्जा से अभिप्रेरित करने को तत्पर है। क्योंकि आचार्य तुलसी एक ऐसा नाम हैं, जो वर्तमान जैन परम्परा में ही नहीं अपितु, समग्र अध्यात्म जगत् में अप्रतिम, अग्रिम और देदीप्यमान है। इसीलिये वे अध्यात्मधरा के उज्ज्वल नक्षत्र, मानवता के मसीहा, समाज सुधारक व युग पुरुष से उपमित हुए। उनके विरल व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व में कुछ विलक्षण विचारों का संग्रहण था। भारत के उच्च मानवीय एवं नैतिक मूल्यों को पुनः एक बार जाग्रत होते और कायाकल्पित होकर परम वैभव के साथ संसार में श्रेष्ठ सिंहासन पर विराजित करने का अवसर देने के संकल्प के साथ जन्मषताब्दी की सम्पूर्ण योजनाओं को उस महापुरुश के सपनों के अनुरूप आकार दिया जा रहा है।

आज राष्ट्र के विकास में आचार्य तुलसी के विचारों की प्रासंगिकता और सार्वकालिकता हमें स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही है। सम्पूर्ण विश्व का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि तत्कालीन सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों में यदि "तुलसी विचार" का पाथेय समाज के पास होगा तो भारतीय समाज एक बड़े दिशा भ्रम का शिकार होने से बचा रह सकता है। यह आचार्य तुलसी का राष्ट्रवादी चिंतन ही था जिसने राष्ट्रीय निर्माण की प्रक्रिया में ना केवल उत्प्रेरक की भूमिका का निर्वाह किया अपितु आने वाली अनेकों पीढ़ियों को राष्ट्र प्रेम एवं नैतिक आस्था के अमूल्य उपहार से प्रेरित भी किया।

बीसवीं शताब्दी में भारत में जिन स्वनाम धन्य महापुरुषों ने जन्म लिया उनमें आचार्य तुलसी का विशिष्ट स्थान है। आत्मिक प्रकाश से आलोकित उनका भव्य शानदार व्यक्तित्व जादुई प्रभाव से युक्त था। जो भी उनके सम्पर्क में आता, उनसे प्रभावित हुए बिना न रहता। उनकी चमत्कारी व्यक्तित्व, व्यापक अध्ययन, गहरी अन्तर्दृष्टि, वर्तमान के साथ भूत और भविष्य को देखने की सामथ्र्य, आत्म-विश्वास, आत्मसंयम, एकाग्रता, शांत स्वभाव, अदम्य साहस, निर्भीकता, तार्किकता, उत्कृष्ट प्रवचन क्षमता, प्रेम-भाव आदि देश-काल की सीमाओं को लाँघ कर मानव-मात्र को प्रभावित करने के लिए पर्याप्त थे। निःसंदेह उनमें एक आध्यात्मिक गुरु बनने एवं दिग्भ्रमित मानवता को सार्वभौम एकता एवं आत्म-विकास का दिव्य सन्देश देने की अद्भुत क्षमता थी।

आचार्य तुलसी का सम्पूर्ण साहित्य जीवन के समस्त शुभों का एकीकृत संकलन है, जिसमें जीवन के विविध पक्ष अपनी सार्थक भूमिका में प्रेरणास्पद रूपाकार ग्रहण करते हैं। जीवन की सार्थक दिशा तय करने में इससे अधिक ऊर्जास्पद सहायक साहित्य ढूँढना दुष्कर है। मन, शरीर, आत्मा को सबल बनाने का संदेश देने वाला यह साहित्य और इसके नायक का जीवन जाग्रत, अनादि और नैतिक भारत का प्रत्यक्ष चित्र है।

ग्यारह वर्श की उम्र में संयम मार्ग पर अग्रसर होना और यौवनावस्था की दहलीज यानी मात्र 22 वर्ष की वय:क्रम में तेरापंथ धर्मशासन की आचार्य वासना को संभालना कोई साधारण बात नहीं थी। ऐसे क्षणों में साधारणत: नेतृत्व की नैया कैसे-कैसे आरोह-अवरोहों से गुजरती है यह तो वही जान सकता है जो अनुभव-जन्य-भोगी होता है। किन्तु आचार्य तुलसी का व्यक्तित्व जन्म से ही कुछ असाधारण विशेषताओं से प्रतिबद्ध था। कुशाग्रबुद्धि, चतुरता, श्रद्धा व समर्पण भाव उनके सहज गुण थे। इसलिये आपके आचार्य पदारोहण उपरान्त भी अपने गुरु अष्टमाचार्य पूज्य कालूगणी के प्रति अगाध श्रद्धा व आदर्श भाव था। वे पल-पल उनकी स्मृति करते और दुष्कर क्षणों को त्वरित आसान पाते व पथ स्वत: प्रशस्त हो जाता। फलत: नन्हे-नन्हे कंधों पर सौंपा गया समूचे गण का भार वे बखूबी से वहन कर सके तथा सारना-वारना में भी वे एक महान् सिद्धहस्त धर्म नेता सिद्ध हुए।

आचार्य तुलसी के युग को 'नैतिक मूल्यों की स्थापना का युग' या 'नया-युग' कहा जा सकता है। सचमुच समय अपनी करबट पलट रहा था। लोग शिक्षा, दीक्षा की समीक्षा कर उसे तर्क की कसौटी पर कस कर निदान पाने को उद्यत थे। फिर धर्म क्षेत्र इससे कैसे अछूता रह सकता था ? केवल बाह्य क्रिया-काण्ड व उपासना ने लोगों के दिलों-दिमाग को आन्दोलित ही नहीं किया, उनकी धारणाएं घृणा में बदलती जा रही थी। धर्म से विमुखता परिलक्षित हो रही थी और ऐसे धर्म से लोगों का विश्वास उठता जा रहा था।

मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर, उपाश्रय, धर्म-स्थानक, देवालयों एवं संतसमागमों में पहुंच कर साधना-सेवा कर लेने मात्र से धार्मिकपन की पहचान बना लेना, एक बाना बन गया था। क्योंकि उस धार्मिक प्रेरणा, उपासना व क्रिया-कांड का व्यवहार्य जीवन के साथ कोई सरोकार दृष्टिगत नहीं हो रहा था। भीतर व बाहर का यह अलग-अलग धर्म ! दोहरी नीति वाला यह कैसा धर्म ? यह कैसी धार्मिकता ?
आचार्य श्री तुलसी परिस्थिति के प्रवीण पारखी व विशेषज्ञ थे। उन्होंने सत्य-तथ्य को तत्काल पकड़ा तथा अणुव्रत के माध्यम से एक ऐसा आदर्श धर्म-पथ प्रस्तुत किया, परोसा कि वह सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय और सर्वजन स्वीकाराय साबित हुआ। नैतिक, प्रामाणिक, चारित्रिक व मानवोचित मूल्यों को अंगीकार करने, उन्हें प्रतिष्ठापित करने हर कोई सक्रिय बनते गये। अत: अणुव्रत-दर्शन ने धर्म की उस रूढ़ परिभाषा को वस्तुत: निरस्त कर दिया।

'निज पर "ासन फिर अनुषासन' का उद्घोश देने वाले आचार्य श्री तुलसी ने अपने उद्बोधनों में, प्रवचनों में कहा- धर्म की उपासना व क्रियाकांड नि:श्रेयस तक पहुंचने का एक पक्ष हो सकता है किन्तु यह समीचीन नहीं है। उन्होंने धर्म के यथार्थ बिन्दुओं को उजागर किया। नैतिकता के तहत सौहार्दता, सद्व्यावहारिकता, सार्वभौमता, सहअस्तित्वता और भाईचारा आदि हर व्यक्ति की दैनन्दिनी में घुल-मिल जाए। ऐसे में एक सच्चे धार्मिक व्यक्तित्व का निर्माण होगा। धर्म की यह नयी व्याख्या लोगों के दिलों छू गयी।

अणुव्रत आन्दोलन आचार्य श्री तुलसी का एक असाम्प्रदायिक अवदान है। उसकी बुनियाद संयम पर आधारित है। अणुव्रत का घोष है- 'संयम: खलु जीवनम्'-संयम ही जीवन है। अणुव्रत का यह संयम शब्द उन पांच महाव्रतों (अहिंसा, सत्य, अचैर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह) द्वारा पोषित है जिनके अनुसरण में नैतिकता व आध्यात्मिकता की साधना निहित है।

अणुव्रत, भारतीय जन जीवन को निकट लाने में शत-प्रतिशत सफल रहा है। हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई या जैन क्यों न हो। ऊँच-नीच, रंग-भेद तथा वर्ग-जाति इत्यादि भावना से ऊपर उठ कर सिर्फ मानव धर्म प्ररूपण की प्रधानता रही है अणुव्रत में। ऐसे में सहस्रों लोग जो अपने आपको धर्म से अलग मानते थे, नास्तिक मानते थे वे अणुव्रत को अपना कर, सच्चे धार्मिक बने हैं। अणुव्रत का विशाल समाज बना है।

आचार्य श्री तुलसी के इन मानवतावादी अवदानों ने, उनके उदात्त दृष्टिकोण ने जन-मन को आपस में जोड़ा है। समन्वय की धवल-धारा ने लोगों के कलुषित विचारों को धोया है। आचार्य श्री तुलसी के समन्वयमूलक, स्याद्वादी और अनेकान्तयुक्त विचारों के तहत ही भारत सरकार ने उन्हें दो बार राष्ट्रीय एकता समिति में ससम्मान सदस्य मनोनीत किया और इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय एकीकरण पुरस्कार-1992 का सम्मान भी उन्हें प्रदान किया।
जैन जगत् के विभिन्न आम्नायों में अमुक विचार सरणी, मान्यताओं व परम्पराओं के परिप्रेक्ष्य में विविधता का बोलबाला है।

आचार्य श्री तुलसी ने उन विभिन्न विचारों की एकरूपता के लिये जीवनपर्यन्त अथक प्रयास किया। इसका परिणाम व फलश्रुति भी देखी गयी-'भगवान महावीर की पच्चीससौवीं निर्वाण जयन्ती' पर देश की राजधानी दिल्ली में-उस अवसर पर भव्य समारोह का आयोजन हुआ जिसमें जैन धर्म के चारों सम्प्रदायों के प्रमुख आचार्यों व अग्रज महानुभावों ने बड़े सौहार्द भाव से सम्मिलित होकर एक आचार, एक विचार, एक चिन्ह और एक ध्वज-तले उस अलौकिक समारोह को बड़े गर्व से मनाया और अपने आराध्यदेव भगवान महावीर को श्रद्धांजलि अर्पित की। यह कोई साधारण उपलब्धि नहीं थी। आचार्य तुलसी की उसी समन्वयक रीति व मुक्ति ने यह कार्य किया। उसी नीति को आपने थामे रखा और समय-समय पर जैन सम्प्रदाय के अगुवाओं को अपनी बलवती प्रेरणा, उद्बोधन व मार्गदर्शन प्रदान किया। उन बैठकों में जैन एकता तथा सांवत्सरिक एकरूपता साधने के लिये खुल कर चिन्तन-मन्थन चला। आपने अपने निस्पृह व्यक्तित्त्व का परिचय प्रस्तुत किया। किन्तु, खेद है कि आचार्यवर की उदार एवं उदात्त सोच का अभी तक अंकन नहीं किया गया।

आचार्य तुलसी आशावादी थे। निराशा नाम का शब्द उनके शब्दकोश में था ही नहीं। अत: अन्तत: वे समन्वय सम्बन्धी कार्यों के लिये जूझते रहे। आचार्यश्री न केवल जैन सम्प्रदायों की विचारधाराओं को एक करने में जुटे रहे बल्कि समस्त भारतीय ही नहीं, समूची अन्तर्राष्ट्रीय जनमेदिनी को भी जोड़ने में उनकी प्रमुख भूमिका रही। उनके समक्ष आत्म धर्म के अतिरिक्त समाज धर्म, राष्ट्र धर्म और देशातीत धर्म का विस्तृत मंच था। इसका उम्दा उदाहरण है-पंजाब समस्या के समाधान में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका और इस हेतु राजीव गाँधी व लोंगोवाला को प्रेरित करना। इसी तरह सन् 1994 में भारतीय संसद में आये गतिरोध के परिष्कार में भी उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया।

जीसस क्राइस्ट के शब्दों में- 'आध्यात्मिक दृष्टि से शांति स्थापित करना और भौतिक दृष्टि से शांति की प्रतिष्ठापना में रात-दिन का अंतर है।' भौतिकता की दृष्टि में युद्ध व शांति दोनों अपने-अपने स्वार्थों से जुड़े हैं, इसीलिए इन दोनों को अलग कर पाना कठिन है। इसीलिए आचार्य तुलसी ने अणुव्रत आन्दोलन के माध्यम से शांति स्थापित करने का जो बीड़ा उठाया था उसका पथ आध्यात्मिकता रहा।

वे स्थायी शांति की चाह रखते थे। आचार्य तुलसी ने अहिंसा के दर्शन की व्याख्या की है। उनका संपूर्ण जीवन अहिंसा का पर्याय है। उन्होंने लगभग एक लाख किलोमीटर की पद-यात्रा की है। पद-यात्रा का उद्देश्य गाँव-गाँव, शहर-शहर अहिंसा एवं नैतिकता की रक्षा करना और लोगों की उसके प्रति आस्था बढ़ाना रहा। आचार्य तुलसी का अहिंसा दर्शन प्राणि-मात्र की हिंसा तक की ही व्याख्या नहीं करता अपितु पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, वनस्पति, पृथ्वी, जल, पर्यावरण आदि भी उसमें समाहित हैं।

तत्कालीन भौतिक जगत अनेक समस्याओं में उलझा हुआ था, अशांति और अराजकता की चपेट में था और आचार्य तुलसी का प्रयास समाज में शांति की स्थापना करने, अहिंसा की चेतना का जागरण करने एवं नैतिक मूल्यों का विकास करने एवं राष्ट्र में सौहार्द, सद्भावना एवं शांति स्थापित करने की दिशा में निरंतर गतिशील रहता था। तुलसी के अवदानों का आकलन एवं अनुभव कर यह कहना न्यायोचित एवं तर्कसंगत है कि वे शांति एवं सांप्रदायिक सद्भाव के पर्याय थे।

आचार्य तुलसी अध्यात्म की भूमिका पर खड़े होकर शांति एवं सद्भाव का मार्ग प्रस्तुत करते रहे। उस कालजयी व्यक्तित्व की जन्मषताब्दी मनाते हुए हमारा संकल्प शांति एवं सद्भाव की स्थापना हो और इसके लिए जहाँ एक ओर हिंसा तथा संपत्ति और सत्ता की बुराइयों को रोकना होगा वहीं दूसरी ओर इस सच्चाई को भी स्वीकार करना होगा कि मानव जाति का हित संघर्ष में नहीं, वरन् उन सामान्य हितों में है जिनसे राष्ट्रों के बीच सहभागिता बढ़े तथा हितों की ओर वे प्रयाण कर सके। आचार्य तुलसी की मंगलकारी भावना आज भी विश्व में शांति सद्भावना पैदा कर मंगलमय जीवन का भविष्य निर्धारित करने का सक्षम माध्यम हो सकती है।

प्रेषक:
(ललित गर्ग)
ई-253, सरस्वती कंुज अपार्टमेंट
25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-92
फोन: 22727486, 9811051133

.